B.A. I Hindi Hons.

संत साहित्य की प्रवृत्तियाँ का शेषांश

डॉ० सतीश चन्द्र पाठक
प्राध्यापक, हिन्दी विभाग
एस०एन०एस० कॉलेज, जहानाबाद

(12) ज्ञान की प्रधानता :- संत साहित्य की यह सर्वमान्य प्रवृत्ति है - ज्ञान की प्रधानता। समस्त संत कवियों ने ज्ञान के महत्व को एक स्वर से स्वीकार किया है। जन सामान्य माया के बंधन में पड़कर मकड़ी की भाँति नाचता रहता है। सच तो यह है कि माया का आवरण इतना प्रबल है कि वह हमें सत्य को देखने नहीं देता। जो मिथ्या है उसे ही माया सत्य साबित करने का प्रयास करती है। न केवल संत काव्य में वरन सगुण भक्ति काव्य में भी माया की प्रबलता को स्वीकार किया गया है। संत कवियों की मान्यता है कि जब ज्ञान की आँखें खुल जाती हैं तो जगत का सारा प्रपंच तिरोहित हो जाता है। माया की सुन्दर नगरी हिल जाती है और उसकी नश्वरता पर पड़ा आवरण समाप्त हो जाता है। किन्तु यह ज्ञान सामान्य अवस्था में प्राप्त नहीं होता वरन इसके लिए शरीर को तपाना पड़ता है। जब ज्ञान की प्राप्ति होती है तो जीवन को देखने की दृष्टि भी बदल जाती है -

"ज्ञान की आँधी आती है, माया की टाटी उड़ाती है।"

और जब माया की टाटी उड़ जाती है तब परम सत्य ही शेष रह जाता है। दुनियां के सारे भ्रम दूर हो जाते हैं -

संतो आई, ज्ञान की आँधी।
भ्रम की टाटी सबै उड़ानी माया रहै न बाँधी।।

इस प्रकार संत साहित्य में नाना रूपों में ज्ञान की महत्ता गायी गयी है। समस्त संत कवियों ने अपनी वाणी में ज्ञान प्राप्ति का आह्वान किया है ताकि जीवन की सच्चाई साफ-साफ दिखलाई पड़ सके। उनकी दृष्टि में ज्ञान एक ऐसा प्रकाश स्तंभ है जिसके सामने माया का अंधकार टिक ही नहीं सकता। इस प्रकार संत काव्य ज्ञान की शक्ति को पहचान कर उसकी प्राप्ति हेतु नाना प्रकार के उद्योग करता है और परम सत्य की प्राप्ति करता है।

(13) भाषा एवं शैली :- कतिपय अपवादों को छोड़कर समस्त संत कवि अशिक्षित थे। उन्होंने विधिवत् शिक्षा की प्राप्ति नहीं की थी। किन्तु जीवन सत्यों का अर्जन किया था। ऐसे में जब उनकी अभिव्यक्ति की आवश्यकता अनुभव की गयी तब उन्हें भाषा की आवश्यकता हुई। चूंकि वे अशिक्षित थे इसीलिए उनकी भाषा में सहज ग्राम्यता दिखलाई पड़ती है इसके अतिरिक्त वे सत्संग के क्रम में निरन्तर घूमते रहते थे अतः उनकी भाषा में विभिन्न क्षेत्रों के अनेक शब्द जुड़ते चले गये। यही कारण है कि इनकी भाषा में अवधी, ब्रजभाषा, बुंदेली, राजस्थानी, अरबी, फारसी, एवं हिंदी इत्यादि भाषाओं और बोलियों के शब्दों का मिश्रण उपलब्ध होता है। इनकी भाषा को हम खिचड़ी भाषा कह सकते हैं। आचार्य शुक्ल ने तो इनकी भाषा को सधुक्कड़ी भाषा का संबोधन ही दिया है। इनकी भाषा में साहित्यिक तत्वों का अभाव प्रतीत होता है क्योंकि शब्द अनगढ़ हैं और इनका प्रयोग सुन्दर तरीके से नहीं हुआ है। वस्तुतः संत कवियों का उद्देश्य कविता लिखना नहीं था वरन वे तो अपने अन्तःसत्यों को अभिव्यक्त करना चाह रहे थे। इसीलिए इनके काव्य में सत्य, ज्ञान इत्यादि की अभिव्यक्ति तो सफलता से हुई है किन्तु उनमें शब्द सौष्ठव का अभाव प्रतीत होता है। आचार्य शुक्ल कबीर की भाषा पर विचार करते हुए कहते हैं कि कबीर भाषा के डिक्टेटर थे। कमोबेश अन्य संतकवियों की भी यही स्थिति है।

संतकवियों ने अपनी अभिव्यक्ति को पूर्णता देने के लिए काव्य का आश्रय लिया - गद्य का नहीं। काव्य में जो रागात्मकता होती है वह सामने वाले को प्रभावित करती है। इन्होंने काव्य की विभिन्न शैलियों का प्रयोग किया है। सबसे पहले तो इन्होंने गीतकाव्य या मुक्तक काव्य का प्रयोग किया है क्योंकि इनका जो कथ्य था वह प्रबंध के अनुकूल नहीं था। उस समय की प्रचलित प्रायः समस्त काव्यशैलियों का प्रयोग इन कवियों ने किया है। दोहा, चौपाई, पद, सूक्तियां इत्यादि का प्रयोग प्रसंगानुकूल किया गया है। गीत मुक्तकशैली का प्रयोग इनके द्वारा हुआ है जिसमें गीतकाव्य के प्रायः समस्त तत्वों का समावेश हुआ है ~~भावात्मकता~~, यथा - भावात्मकता, संगीतात्मकता, वैयक्तिकता और भाषा की कोमलता तथा भावों की तीव्रता। उपदेशात्मकता की प्रधानता होने पर इनमें रसात्मकता के साथ ही माधुर्य का अभाव हो गया है जो स्वाभाविक भी है।

03/2018

Monday	–	5	12	19
Tuesday	–	6	13	20
Wednesday	–	7	14	21
Thursday	1	8	15	22
Friday	2	9	16	23
Saturday	3	10	17	24
Sunday	4	11	18	25

संतकाव्य अनेक दृष्टियों से अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं प्रभावशाली काव्यात्मक एवं सामाजिक आन्दोलन था। अनैतिकता से ग्रस्त कुछ युग में इन्होंने समाज में ~~[illegible]~~ दृढ़ नैतिकता की पुनर्स्थापना की थी। अपने काव्य से इन्होंने केवल तत्कालीन समाज को प्रभावित किया वरन आनेवाली शताब्दियों को भी प्रभावित किया। इस दृष्टि से संतकाव्य का महत्व साहित्यिक तथा सामाजिक दृष्टि से भी अद्भुत है। यह एक अमर साहित्य है जिसमें आध्यात्मिक एवं सामाजिक ज्ञान का कोष आज भी सुरक्षित है। ऐसे ही साहित्य के कारण पूर्वमध्यकाल को हिन्दी साहित्य का स्वर्णकाल कहा जाता है।

notes

Phone

email